हार्डीमैन का अधीनस्थ या दलितोद्धार परिप्रेक्ष्य
(Subaltern Perspective of Hardiman)

हार्डीमैन भी उन विचारकों में से हैं जो दलितों का कल्याण और उत्थान चाहते हैं। हार्डीमैन ने अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तकों में पश्चिमी भारत के आदिवासियों की स्थिति, भू-स्वामियों एवं साहूकारों द्वारा किए जाने वाले उनके शोषण, शोषण के परिणामस्वरूप उनमें विकसित असन्तोष तथा आन्दोलन का विशद् विश्लेषण किया है। उनका यह विश्लेषण दक्षिण गुजरात क्षेत्र में रहने वाले आदिवासियों पर आधारित है। उनके विश्लेषण को भारत में 'कृषक मानसिकता' (Peasant mentality) तथा 'कृषक आन्दोलनों' (Peasant movements) को समझने में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना जाता है।

हार्डीमैन जब 1972 ई० में ग्रामीण गुजरात में राष्ट्रवादी आन्दोलन पर अनुसन्धान करते समय जब दक्षिण गुजरात में थे तो उन्होंने आदिवासियों में होने वाले 'देवी' आन्दोलन के बारे में सुना था। तभी से उनमें इस आन्दोलन के अध्ययन की रुचि जाग्रत हुई थी। जब वे पुनः 1980 ई० में भारत में आए तो उन्होंने आदिवासियों के इस आन्दोलन का अध्ययन करने का मन बना लिया था। यह आन्दोलन 1922 ई० में दक्षिण गुजरात के उन आदिवासियों ने प्रारम्भ किया जो अपने जीवन उत्थान हेतु तथा इसे बदलने हेतु प्रयासरत् थे। चूँकि इस आन्दोलन की प्रेरणा उन्हें 'देवी' से प्राप्त हुई थी, इसलिए वे अल्प समय में ही इस देवी शक्ति की प्रेरणा से एक झण्डे तले संगठित हो गए तथा स्थानीय भू-स्वामियों, साहूकारों तथा शराब के व्यापारियों के विरुद्ध संघर्ष करने लगे। यह आदिवासी आन्दोलन यद्यपि एक धार्मिक आन्दोलन के रूप में प्रारम्भ हुआ तथापि शीघ्र ही इसने आदिवासी प्रभुत्व हेतु संघर्ष का रूप ग्रहण कर लिया। ऐसे ही आन्दोलनों का उल्लेख भारत के अनेक अन्य हिस्सों से भी मिलता है परन्तु इन्हें आधुनिक भारतीय इतिहास के हाशिये पर रख दिया गया है।

हार्डीमैन का विचार है कि भारतीय इतिहास को समझने में ऐसे आन्दोलनों को हाशिये पर रखना एक बहुत बड़ी भूल है क्योंकि इस प्रकार के संघर्ष आदिवासियों में धार्मिकता, कृषक चेतना, ग्रामीण भारत में पूँजीवाद की ओर बढ़ते हुए कदम, सामन्तवादी एवं पूँजीवादी प्रभुत्व के विरुद्ध आदिवासियों के निरन्तर होते हुए संघर्षों तथा ग्रामीण स्तर पर भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को समझने में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध कराते हैं। अपने अध्ययनों में हार्डीमैन ने आदिवासियों के इसी प्रकार के आन्दोलनों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया है। हार्डीमैन ने निरन्तर पाँच वर्ष दक्षिण गुजरात में आदिवासियों के बीच रहकर ही इस आन्दोलन का अध्ययन किया। उन्होंने आन्दोलन करने वाले लोगों के लिए 'जनजाति' शब्द के स्थान पर 'आदिवासी' शब्द को ही उचित माना है।

जब हार्डीमैन 'देवी' आन्दोलन का अध्ययन कर रहे थे तो उनकी मुलाकात 'अधीनस्थ अध्ययन समूह' (Subaltern Studies Group) के रंजीत गुहा एवं अन्य सदस्यों से हुई। इन्हीं से हार्डीमैन को इस आन्दोलन को अधीनस्थ परिप्रेक्ष्य द्वारा देखने की सतत् बौद्धिक प्रेरणा प्राप्त हुई। उनकी देवी आन्दोलन पर लिखी पुस्तक भारत के सुप्रसिद्ध समाजशास्त्री आई० पी० देसाई को समर्पित है। आई० पी० देसाई ने उन्हें दक्षिण गुजरात क्षेत्र का काफी ज्ञान उपलब्ध कराया तथा आदिवासियों के बारे में लिखने में सहायता प्रदान की।

9 नवम्बर, 1922 को बोम्बे प्रेजीडेन्सी के सूरत जिले की पूर्वी सीमा पर रहने वाले लगभग 2,000 आदिवासी खानपुर नामक गाँव में एकत्रित हुए। छह भिन्न-भिन्न गाँवों में रहने वाले ये आदिवासी एक नई देवी, जो 'सालाबाई' के नाम से जानी जाती थी, के उपदेश सुनने के लिए एकत्रित हुए थे। ऐसा माना जाता था कि यह देवी पहाड़ों से आई थी तथा आत्माओं के मुख के माध्यम से अपनी माँगें व्यक्त करती थी। आदिवासी एक लकड़ी के तख्त पर बिखरे पत्तों पर बैठ जाते थे तथा अपने हाथों में लाल कपड़ा पकड़े रहते थे। थोड़ी देर में ही देवी के प्रभाव से ये लोग अपने सिरों को हिलाने लगते थे तथा शीघ्र ही अचेतन अवस्था में पहुँच जाते थे। इस अवस्था में वे देवी द्वारा दिए गए आदेश आदिवासियों को बताते थे। बताए जाने वाले कुछ आदेश निम्न प्रकार थे—

- शराब एवं ताड़ी का सेवन बन्द करो,
- मीट एवं मछली का सेवन बन्द करो,
- एक स्वच्छ एवं सादा जीवन व्यतीत करो,

- पुरुषों को प्रतिदिन दो बार स्नान करना चाहिए,
- स्त्रियों को प्रतिदिन तीन बार स्नान करना चाहिए,
- पारसियों से कोई सम्बन्ध मत रखो।

जब उपर्युक्त उपदेश समाप्त हो जाते थे तो आदिवासी एक छोटी लड़की, जो देवी की वेशभूषा में बैठी होती थी, को सिक्के अर्पित करते थे तथा घरों को वापस लौटने से पहले सामूहिक रूप से खाना खाते थे। आदिवासियों का विश्वास था कि देवी किसी भी जीवित पशु या प्राणी; बैल, पुरुष या महिला में प्रवेश कर सकती है तथा उनके माध्यम से अपने आदेश उन तक पहुँचा सकती है। देवी आन्दोलन शीघ्र ही गुजरात जिले के अन्य क्षेत्रों में भी फैल गया तथा बहुत बड़ी संख्या में आदिवासी देवी के उपदेशों एवं आदेशों को सुनने आने लगे। कुछ समय पश्चात् आदिवासियों को कुछ नए आदेश दिए जाने लगे; जैसे—गांधी जी के नाम पर धनुष-बाण रखना, खादी के कपड़े पहनना तथा राष्ट्रवादी स्कूलों में जाना।

देवी ने उन्हें ईसाई न बनने की भी प्रेरणा दी। दारू और ताड़ी के स्थान पर चाय पीने, दारू एवं ताड़ी की दुकानों पर नौकरी न करने, शाकाहारी भोजन करने, जिन बर्तनों में खाने हेतु माँस, मछली या अण्डे बनाए जाते थे उन्हें नष्ट करने, मछली पकड़ने वाले जालों को जला देने, किसी भी जीव को खाने हेतु ना मारकर अहिंसा का पालन करने, बैलों से कठोर काम न लेने, प्रतिदिन दो-तीन बार स्नान करने, स्नान करने के पश्चात् ही बनाने एवं खाने, कपड़ों एवं घरों को साफ रखने, बनियों से उधार न लेने एवं उनके घरों के बरामदों में भी प्रवेश न करने तथा पारसी साहूकारों से किसी भी प्रकार का सम्पर्क न रखने जैसे देवी आदेशों का आदिवासियों ने खुलकर समर्थन किया तथा इन्हें व्यवहार में अपनाया भी।

शीघ्र ही इन उपदेशों के परिणाम भी सामने आने लगे। आदिवासियों ने साहूकारों से लगान देने हेतु कर्ज लेना बन्द कर दिया। उन्होंने संस्कारों पर होने वाले फिजूल खर्च भी बन्द कर दिए तथा शराब जैसी बुराइयों से भी अपने हाथ खींचने लगे। इससे उनके रहन-सहन में सुधार होने लगा जो उनके घरों की देखभाल तथा घरों में प्रयोग किए जाने वाले बर्तनों से स्पष्ट देखा जा सकता था। सादा जीवन व्यतीत करने, कुरीतियों एवं बुराइयों को छोड़ने तथा साहूकारों के चंगुल में न फँसने के कारण आदिवासियों के जीवन-स्तर में उल्लेखनीय सुधार हुआ।

हार्डीमैन ने आदिवासियों द्वारा अपनी स्थिति में किए जाने वाले सुधार हेतु प्रयासों को **एम० एन० श्रीनिवास** (M. N. Srinivas) द्वारा प्रतिपादित संस्कृतिकरण की प्रक्रिया के रूप में भी स्वीकार किया है। आदिवासियों द्वारा देवी आन्दोलन के दौरान सामूहिक रूप से माँसाहारी से शाकाहारी बनने, रोज दो-तीन बार स्नान कर पवित्रता सम्बन्धी नियमों का पालन करने के पीछे उनका लक्ष्य हिन्दू जातीय संस्तरण में एक छूत या स्वच्छ जाति (Clean caste) का स्थान प्राप्त करना ही था। इस दृष्टि से यद्यपि यह 'जनजातियों में संस्कृतिकरण' की प्रक्रिया का एक अद्भुत उदाहरण है, तथापि इसे इतनी सरल प्रक्रिया नहीं माना जाना चाहिए। **एस० सी० राय** (S. C. Rao) ने ओराँव जनजाति के अध्ययन में आर्य समाज द्वारा शुद्धि संस्कार के माध्यम से आदिवासियों को हिन्दू बनाने में मिली असफलता का उल्लेख किया है जो इस बात का द्योतक है कि केवल शाकाहारी बनने एवं पवित्रता सम्बन्धी नियमों का पालन करने से ही कोई आदिवासी समूह हिन्दू जाति संस्तरण में छूत या स्वच्छ जाति का स्तर प्राप्त नहीं कर सकता है।

हार्डीमैन ने दक्षिण गुजरात में स्थित अनेक गाँवों का अध्ययन किया है जिनमें 'सतवाव' नामक गाँव प्रमुख है। गाँव का यह नाम सात कुओं (वाव) के इर्द-गिर्द झुण्डों में रहने वाले आदिवासियों

का द्योतक है। गाँव में प्रमुख तौर से दो वर्ग हैं—एक उनका जो भू-स्वामी हैं और दूसरा उनका जो खेतीहर मजदूर हैं। मजदूर लोग भू-स्वामियों की जमीन पर नौकर की तरह कार्य करते हैं। उन्हीं पर भू-स्वामियों की कृषि व्यवस्था निर्भर करती है। कार्य के बदले में भू-स्वामियों द्वारा मजदूरों को दिया जाने वाला प्रतिफल बहुत कम होता है। इससे वे इज्जत की जिन्दगी भी नहीं जी सकते। भू-स्वामियों द्वारा खेतीहर मजदूरों का शोषण काफी असहनीय होता था। इसके परिणामस्वरूप अनेक आदिवासी गाँव छोड़कर ही किसी अन्य स्थान की ओर प्रवास कर जाते थे। देवी आन्दोलन ने उन्हें जो शक्ति प्रदान की उसके परिणामस्वरूप उन्होंने प्रवास करने का रास्ता छोड़कर स्वयं बुराइयों एवं फिजूलखर्ची को छोड़कर अपने जीवन-स्तर को ऊँचा करने का रास्ता अपनाया। हार्डीमैन का कहना है कि आदिवासियों में देवी आन्दोलन से प्रभावित होकर स्वयं फिजूलखर्ची बन्द कर साहूकारों के चँगुल से बाहर निकलने का सफल प्रयास किया तथा अपने जीवन-स्तर को ऊपर उठाया। हार्डीमैन ने इस सन्दर्भ में राजनेताओं और प्रशासकों से भी सम्पर्क स्थापित किया और उन्हें दलितों को राहत देने की वकालत की।

हार्डीमैन का कहना है कि मेरा यह अध्ययन 'अधीनस्थ अध्ययन समूह' द्वारा किए जाने वाले अध्ययनों की भाँति ही है क्योंकि इसका उद्देश्य आदिवासियों में विकसित होने वाली चेतना तथा स्वयं आदिवासियों द्वारा बिना विशिष्टजनों की सहायता से अपनी स्थिति में सुधार हेतु किए जाने वाले प्रयासों को समझना है। यद्यपि आदिवासियों में होने वाले देवी आन्दोलन की प्रकृति मूल रूप से धार्मिक थी, तथापि इसने आदिवासियों को एक होकर अपनी स्थिति में सुधार करने की प्रेरणा प्रदान की।

दक्षिण गुजरात में हुआ देवी आन्दोलन 19वीं शताब्दी के अन्त में तथा 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ में भारत के अनेक अन्य भागों में हुए आदिवासी आन्दोलनों से काफी समानताएँ लिए हुए है। उदाहरणार्थ—1914-15 ई० में छोटा नागपुर के ओराँवों में हुए 'ताना भगत' आन्दोलन में भी दैवीय आदेशों के अनुरूप आदिवासियों ने अनेक अन्धविश्वासी प्रथाओं एवं पशु बलि को छोड़ दिया, माँस खाना एवं शराब पीना छोड़ दिया, अपने खेतों पर हल चलाना बन्द कर दिया तथा गैर-आदिवासी भू-स्वामियों के खेतों पर कृषि श्रमिकों के रूप में कार्य करना बन्द कर दिया। देवी आन्दोलन की तरह यह भी बाद में एक राष्ट्रवादी आन्दोलन में परिवर्तित हो गया। 1921 ई० में छोटा नागपुर में ही भूमजी आदिवासियों में हुआ आन्दोलन भी देवी आन्दोलन की भाँति ही है। इस वर्ष भूमजी आदिवासियों में यह अफवाह फैल गई कि पृथ्वी पर एक राजा का जन्म हुआ है जो भगवान का अवतार है। उसने भूमजी आदिवासियों को शराब, मछली एवं माँस त्याग देने का आदेश दिया जिसके फलस्वरूप उन्होंने मुर्गों और बकरियों को रखना बन्द कर दिया। इतफाक से इस वर्ष फसल भी अच्छी हुई जिससे आदिवासियों का यह विश्वास दृढ़ हो गया कि उनके द्वारा शराब, मछली एवं माँस का सेवन बन्द कर देना उनके लिए दैवीय शक्ति के कारण शुभ रहा है। तीन-चार वर्ष बाद लोगों ने इस राजा को 'गाँधी महात्मा' का नाम देना प्रारम्भ कर दिया।

हार्डीमैन ने समाजवादी इतिहासकारों द्वारा आदिवासियों में पाई जाने वाली धार्मिकता (Religiosity) की उपेक्षा करना उचित नहीं है क्योंकि इसका उनकी जागरूकता के स्तर पर काफी गहरा प्रभाव पड़ता है। कृषकों एवं आदिवासियों में जिस विचारधारा के परिणामस्वरूप उत्थान हेतु सामूहिक प्रयास हुए हैं वह मूल रूप से धार्मिक ही रही है। इन समुदायों में धर्म ही नैतिक एवं राजनीतिक आचार का आधार रहा है। आदिवासियों के धार्मिक विश्वासों एवं प्रथाओं में नवचेतना के परिणामस्वरूप होने वाले परिवर्तनों का लक्ष्य इनके सामाजिक स्तर को ऊँचा करना ही रहा है।

हार्डीमैन ने विचार व्यक्त किया है कि देवी आन्दोलन जैसे आदिवासी आन्दोलनों का अध्ययन उपनिवेशवादी युग में भारत के इतिहास के केन्द्रीय-मुद्दों (विषयों) के बारे में हमारा ज्ञान काफी बढ़ा सकता है। इस प्रकार के आन्दोलनों का अध्ययन कृषक चेतना, उपनिवेशवाद से पूर्व समाज की संरचना, उपनिवेशवादी शासन एवं नियमों का समाज पर प्रभाव तथा नवीन कठोर सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध आदिवासियों के संघर्ष जैसे मुद्दों पर प्रकाश डाल सकता है तथा इन्हें समझने में सहायता प्रदान कर सकता है। इस प्रकार के अध्ययनों से हमें ग्रामीण स्तर पर भारतीय राष्ट्रवाद को समझने में भी सहायता प्राप्त हो सकती है।